विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. (M) NS (C) 36

वर्ष १२ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२६ • कार्तिक पूर्णिमा [शक] • दि. ३०-११-१९८२ • अंक ६

प्रवचन-प्रवाह

दीक्षान्त-प्रवचन

एक-एक करके शिबिरके दस दिन पूरे हुए। इस महान धर्म-यज्ञकी पूर्णाहुतिका समय आया। काम शुरू करते समय हर साधकसे पूर्णतया आत्म समर्पण कराया गया। समर्पित भाव हो तो ही काम अच्छा होता है। पूरा लाभ मिलता है। इसीलिए समर्पण कराया गया। पर वह समर्पण दस दिनोंके लिए था। समर्पणकी अवधि पूरी हुई। अब हर व्यक्ति आजाद है। धर्म हमेशा स्वाधीन, स्वतंत्र बनाता है; पराधीन परतंत्र नहीं।

अब अपने-अपने घर जाकर शांतिपूर्वक चिंतन-मनन करना कि इन दस दिनोंमें क्या सीखा? जो सिखाया गया क्या वह युक्तिसंगत है? न्याय-संगत है? तर्क-संगत है? बुद्धिसंगत है? लेकिन यही एक मात्र कसौटी नहीं है। बहुत सी बातें जो आज बुद्धि-संगत, तर्क-संगत लगती हैं, कुछ दिनोंके बाद तर्क-हीन लग सकती हैं। बुद्धिकी अपनी सीमाएँ हैं। तो एक और कसौटीसे भी कसकर देखेंगे। क्या इसमें मेरा मंगल-कल्याण समाया हुआ है? लेकिन फिर एक कसौटी और रह जाती है—क्या इससे किसी अन्य प्राणीकी हानि तो नहीं होती? क्या औरोंका भी मंगल समाया हुआ है? जो बात इन तीनों कसौटियों पर खरी उतरती है यानि बुद्धिसंगत है, मेरे लिए मंगलकारी है और साथ-साथ औरोंके लिए भी मंगलकारी है; तो समझदार आदमी इसे सहर्ष स्वीकार करता ही है। और सचमुच समझदार आदमी हो तो केवल बौद्धिक स्तर पर अथवा केवल भावावेशके स्तर पर स्वीकार करके नहीं रह जाता बल्कि वास्तविकताके, यथार्थताके स्तर पर स्वीकार करता है। याने उसे धारण करता है। उसे जीवनका अंग बनाता है। अब किसीके कहनेसे नहीं, किसीके दबावसे नहीं, बल्कि स्वेच्छासे आत्म-समर्पण करता है। किसी व्यक्तिको नहीं बल्कि धर्मको आत्म समर्पण करता है। किसी अवधि तक नहीं बल्कि जीवन भरके लिए आत्म समर्पण करता है। "जीवित परियंत धम्मं सरणं गच्छामि" जीवन भरके लिए धर्मकी शरण आ गया हूँ। अब तो यथाशक्ति सारा जीवन धर्मका ही जीवन जियेगा, मंगलका ही जीवन जियेगा। अपना भी मंगल साधेगा, औरोंका भी मंगल साधेगा।

धम्म वाणी

अधिगतमिदं बहूहि, अमतं अज्जा पि च लभनीयमिदं।
यो योनिसो पयुञ्जति, न च सक्का अघटमानेन॥

थेरी गाथा--५।५.

बहुतों ने अमृत प्राप्त किया है। यह आज भी प्राप्त किया जा सकता है। पर प्राप्त वही करता है जो भली प्रकार प्रयत्न करता है। बिना पुरुषार्थ प्राप्त नहीं होता।

दस दिन स्वयं अनुभव करके देख लिया कि विद्या कामकी है। परन्तु यह तो प्रारंभ मात्र है। रास्ता लंबा है। दस दिनमें तो केवल एक रूप-रेखा मात्र मिलती है। सारे जीवन भरका काम है। सारा जीवन कैसे जियें? शांतिपूर्वक, सुखपूर्वक, जिसमें हमारा भी मंगल सधे, औरोंका भी मंगल सधे? यही धर्मका व्यावहारिक पक्ष है। जो व्यवहार में उतरे वही व्यावहारिक। जो सिद्धान्तों तक रह जाय ऐसा सैद्धान्तिक पक्ष हमारे कामका नहीं। उससे केवल प्रेरणा मिल सकती है। मार्ग-दर्शन मिल सकता है। बस। और कुछ नहीं। लाभ व्यवहारसे ही होता है।

यहाँ दस दिन तक इस धर्म-कारावासमें बंदी बनकर आए और रहे। किस लिए? यही सीखनेके लिए कि धर्मका व्यावहारिक पक्ष कैसे निभाया जा सकता है? शीलका पालन करते हुए कैसे मनको वशमें किया जा सकता है? मनकी तल स्पर्शी गहराइयों तक जाकर कैसे जागते हुए राग अथवा द्वेष को देखकर उन्हें रोका जा सकता है? यही सीखने आए। दिन भर यही अभ्यास करते रहे। हर शामकी धर्म-चर्चा महज इस स्पष्टीकरणके लिए होती थी कि अभ्यास कैसे करें? लेकिन जहाँ धर्म-चर्चा होती है और धर्मके व्यावहारिक पक्षको शब्दोंमें समझाया जाता है वहाँ धर्मका सैद्धान्तिक पक्ष भी उजागर होता ही है। अलग-अलग सैद्धान्तिक विचारधाराओं और परंपराओंसे आये हुए साधकोंमें से किसीको लगे कि अमुक बात हमारी परम्परागत मान्यताओंसे मेल नहीं खाती तो भले उसे अलग रखे। सिद्धांतकी जितनी-जितनी बात ठीक लगे, अपनी मान्यताओंसे

मेल खाती लगे, उतनी–उतनी स्वीकार करे। भविष्यमें जब कभी समझ में आ जाय तब स्वीकार लेना। इससे कुछ नहीं खोयेंगे। मुख्य बात तो व्यावहारिक पक्ष की है।

व्यावहारिक पक्ष शील–सदाचार है, समाधि है–– मनको वशमें करना है, प्रज्ञा है–– चित्तको राग–विहीन, द्वेष–विहीन बनानेका काम है, निर्मल बनानेका काम है। उसे मैत्री करुणा आदि सद्गुणोंसे भरनेका काम है। इसमें भला कोई कैसे विरोध करेगा? ये जो तीन बातें हैं–– शील, समाधि और प्रज्ञा; बस यही धर्मका सार है। इस दायरेके बाहर जो सिद्धान्तकी बात है, वह यदि समझमें न आए, स्वीकारी न जा सके तो उसे छोड़ देनेमें बहुत हानि नहीं।

धर्म के सैद्धान्तिक पक्षकी बात व्यावहारिक धर्मको पुष्ट करनेके लिए ही कही जाती है। बड़े प्यारसे कही जाती है। किसी विरोध भावसे नहीं। पर मुख्य बात व्यावहारकी है, अभ्यासकी है। शील धारण करनेकी है, समाधिमें पुष्ट होनेकी है, प्रज्ञा द्वारा चित्तको निर्मल करनेकी है। इसके विरोधके लिए कहीं स्थान नहीं।

दस दिनके अभ्याससे इस विद्या की एक धूमिलसी रूप–रेखा सामने आयी। दस दिनमें तो मानो किसी उपजाऊ धरतीमें बड़ा मूल्यवान बीज बोया गया। उपजाऊ धरती है। इसलिए यह मूल्यवान बीज फूटकर बाहर आ गया, अंकुरित–प्रस्फुटित हो गया।

अब यह जो नन्हा सा धर्मका पौधा फूटकर बाहर आया है, कुशल मालीकी तरह उसकी खूब सम्भाल करनी है। समझदार माली नन्हेसे बिरवेकी बहुत सेवा संभाल करता है। उसके चारों ओर बाड़ लगाता है। कोई गाय या बकरिया न चर जाय। समय पर पानी देता है; समय पर धूप–छांह। यों सेवा करते–करते जब वह पौधा बढ़कर विशाल वृक्षका रूप धारण कर लेता है, गहरी जड़ोंवाला, मोटे तने–वाला तब किसीकी सेवा नहीं लेता। वह स्वयं अपनी देखभाल कर लेता है। प्रकृतिसे अपनी जरूरतें स्वयं पूरी कर लेता है। बल्कि बदले में सारे जीवन सेवा देता है। जो पैदा करता है सो देता ही है। कितनी शीतल छाया, कितने सुन्दर फूल, कितने मीठे फल! पहले जितनी सेवा ली उससे कई गुना देने लगा।

यह धर्मका बिरवा भी ऐसा ही है। शुरू–शुरूमें खूब सेवा–सुरक्षा चाहता है। इसके चारों ओर बाड़ नहीं लगायेंगे तो कोई गाय बकरिया चर ही जायेगी। यहाँ दस दिन रहते हैं तो बाड़ लगी रहती है। बाहर जायेंगे तो हो सकता है अपनी परम्पराका कोई व्यक्ति कहे, "अरे कहाँ गए थे? उनकी मान्यताएँ तो हमारी परम्पराके बिल्कुल विपरीत। उनमें गए कि डूबे! अपनी परम्पराके तो ये सिद्धान्त वो सिद्धान्त।" फिर वही बुद्धिविलास, वाद–विवाद, तर्क–वितर्क चला कि सारी साधना छूट गयी। चर गयी गाय बकरिया। बचाना है तो चारों ओर बाड़ लगा रखेंगे। कैसी बाड़? ऐसे अवसर पर यही उत्तर देंगे कि दार्शनिक सिद्धान्तोंकी बात इस बाड़ेके बाहर। यह तो व्यवहारका, अभ्यासका बिरवा है। शील, समाधि और प्रज्ञाका बिरवा है। इसमें कहीं झगड़ा नहीं है। इस प्रकार बाड़ लगाकर सब झगड़ोंको एक तरफ रखेंगे। बस बच गया बिरवा।

और फिर इस बिरवेको सुबह–शाम सींचना होगा। कैसे सींचेंगे? सुबह घंटे भर, शामको घंटे भर ध्यान करना ही होगा। अन्यथा बिरवा सूख जायेगा। प्रारंभमें दो घंटे निकालने में कठिनाई मालूम होगी। लेकिन साधक शीघ्र देखेगा कि खूब समय मिलने लगा है। देखेगा कि रोजाना रातको जितनी देर सोया करता था अब एक घंटे कम में ही नींद पूरी होने लगी। इतनी नींदकी जरुरत नहीं। यों घंटा भर तो नींदमें से ही आसानीसे निकल जायेगा। फिर आलस और गप्पोंमें जो समय खराब करता था वह बचने लगेगा। इसके अतिरिक्त जो व्यक्ति जिस काम, धंधे, रोजी, पेशे में है वह देखेगा कि अब रोज सुबह–शाम विपश्यना करनेकी वजहसे अपनी जिम्मेदारी ज्यादा अच्छी तरह और ज्यादा जल्दी पूरी करने लगा। जो काम आठ घंटेमें पूरा करके थक जाता था, अब देखेगा कि वह सात ही घंटेमें पूरा हो गया और स्फूर्ति बनी हुई है। विपश्यनाके अभ्याससे काम करनेकी शक्ति, क्षमता बढेगी। काम अच्छा होगा। परिणाम अच्छे आयेंगे। सफलता अधिक मिलेगी। जो जिस क्षेत्रमें काम करता है उसमें उन्नति करता चला जायेगा। धर्म पलायनके लिए नहीं है। अभिमुख होकर जीने के लिए है। जीना आ जायेगा। अपनी जिम्मेदारियोंके प्रति अभिमुख होकर जियेंगे। स्वतः समाधान मिलने लगेगा।

अपनी–अपनी दिनचर्याकी अनुकूलताके आधार पर सुबह–शाम एक–एक घंटे का समय निश्चित कर लें। जहां तक हो सके निर्धारित समय पर ही साधना करें। इसका अपना लाभ होगा। एक आदत बन जायेगी। लेकिन किसी कारण यदि निश्चित समय पर ध्यान न कर पायें तो उस दिनका ध्यान छूटे नहीं। जब समय मिला तब कर लें।

इसी तरह एक स्थान निश्चित कर लें। उसी स्थान पर उसी आसन पर ध्यान करनेका अपना प्रभाव होता है। ध्यानके लिए अलग कमरा हो तो बहुत अच्छा, नहीं तो अपने रहनेके कमरेमें एक छोटा सा स्थान निश्चित कर लें जहां केवल विपश्यना साधना ही करें। तो देखेंगे नित्य प्रतिकी विपश्यना साधनाकी राग–विहीन, द्वेष–विहीन, मोह–विहीन तरंगें उस स्थानको एक तपोभूमि जैसा बना देंगी। इसका बड़ा लाभ होगा। परंतु यदि किसी कारणवश किसी दिन निश्चित स्थान पर ध्यान न कर सके तो उस दिनका ध्यान छोड़ेंगे नहीं। जहां कहीं सुविधा मिले वहीं करेंगे। मुख्य बात यह है कि दिनमें दो बार एक–एक घंटे साधना अवश्य करेंगे। नियमित साधना न करनेकी बाधा अधिकतर पहले वर्ष में ही आती है। फिर नहीं आती। सहज हो जाती है। अतः वर्ष भर मनको दृढ़ करके दिनमें दो बार एक-एक घंटे साधना करें ही।

और फिर रातको जब लेटें तो आंख बंद करके, भले पांच मिनट ही सही, शरीरमें जहां जो कुछ हो रहा है उसे जानते–जानते सोयें। सुबह आंख खुलते ही पहला काम पांच मिनट तक शरीरकी संवेदनाको जानना। यों अनित्य बोधमें सोयेंगे, अनित्य बोधमें जागेंगे। इसका बहुत बड़ा लाभ होगा।

इसके अतिरिक्त जिस गांवमें, मोहल्लेमें एक से अधिक विपश्यी साधक रहते हों उन्हें चाहिए कि सप्ताहमें कोई एक दिन, कोई एक समय, कोई एक स्थान निश्चित कर लें और वहां सामूहिक साधना करें। सामूहिक साधनाका अपना बड़ा लाभ होगा।

इसके अतिरिक्त साधनामें परिपुष्ट होकर उसका पूरा–पूरा लाभ लेना है तो सुबह–शाम का अभ्यास जितना आवश्यक है उतना ही

सालमें एक बार दस दिनका शिविर। ऐसे किसी तपोभूमिके सार्वजनिक शिविरमें शामिल हो जांय तो बहुत अच्छी बात है। वातावरणका लाभ मिलेगा। अन्यथा अपना शिविर स्वयं लगाएं। स्वयं शिविर लगाना ज्यादा अच्छा है। धीरे-धीरे साधकको स्वाधीन होना चाहिए। अपने पांव पर खड़ा होना चाहिए। पहला शिविर किसीके मार्ग-निर्देशनमें करना अनिवार्य है। परन्तु हमेशा किसी गुरुकी, मार्गदर्शककी बैसाखी लेकर चलेंगे तो मुक्त नहीं हो सकेंगे। स्वयं-शिविर हमें मुक्त बनाता है, स्वावलंबी, स्वाधीन बनाता है। अपने पांव पर खड़े होनेकी हिम्मत आती है। स्वयं-शिविर ऐसे ही करेंगे जैसे यह शिविर किया। यही नियम, यही अनुशासन।

काम शुरू करते ही तीन रत्नोंकी शरण लेंगे। खूब समझकर शरण लेंगे। आठ शील लेंगे और उनका कड़ाई से पालन करेंगे। तीन दिन आना पान और चौथे दिन से विपश्यना करेंगे। सब कुछ इसी तरह करना है जैसे यहां किया। स्वयं-शिविरका वही लाभ होगा जो यहां हो रहा है।

एक बात और समझें। नियमित विपश्यना करते हुए घर-बाहरकी अपनी जिम्मेदारियां अवश्य निभायें। जो व्यक्ति जिस काममें, जिस जिम्मेदारीमें लगा है उसे बखूबी पूरा करना ही उसका उस समयका ध्यान है। कामके समय काममें सारा ध्यान लगाएं ताकि काममें पूरी सफलता मिले। उस समय संवेदना या सांस देखना चाहेंगे तो कठिनाई हो जायेगी। आधा मन यहां, आधा मन वहां। न यह होगा, न वह होगा। इसलिए जब कोई काम करें तो सारा ध्यान उस काममें रखें। खूब कुशलतासे संपन्न होगा वह काम।

लेकिन जब कभी अवकाश मिले, आराम करना हो तो आखें खुली हों, मन भीतर हो। कभी समय नष्ट नहीं करें। एक बात और ध्यानमें रखें-कभी धर्मका दिखावा नहीं करें! अन्य लोगोंके बीच कभी आखें बंद कर ध्यान न करें। ऐसा करेंगे तो भीतर अहंकार जागेगा। मैं बड़ा ध्यानी हूं। जहां धर्मका दिखावा हुआ कि भीतरसे खोखलापन आया। भीतर धर्म नहीं है इसलिए दिखावा चाहता है। अगर है तो क्या दिखावा करेगा? व्यवहार बोलेगा कि धर्मवान है।

साथ ही अपने आपको जांचते रहेंगे कि जीवनमें सुधार आ रहा है कि नहीं? अनचाही बात होने पर पुरानी आदतकी वजहसे चिड़चिड़ा उठेंगे। किसीके साथ बुरा व्यवहार भी कर लेंगे। पर देखना यह होगा कि कितनी जल्दी होश आकर कितनी जल्दी समतामें स्थापित हुए और कितनी जल्दी उसी व्यक्तिके प्रति मंगल मैत्री जागने लगी। बस यों अपने आपको जांचते परखते रहेंगे। ऐसे परखते रहेंगे तो ही जानेंगे कि विपश्यना कर्म कांड नहीं बन रही है। धर्मके रास्ते ठीक चल रहे हैं। विपश्यना साधना करें तो जीवनमें अन्तर आना ही चाहिए। जीवन पहलेसे अधिक सुखी होना ही चाहिए। मंगलमय होना ही चाहिए।

बड़ा अनमोल रत्न मिला है। इसे संभालकर ही नहीं रखना है बल्कि इसका संवर्धन करना है। धर्मका जितना-जितना संवर्धन होगा उतना-उतना अधिक मंगल सधेगा। सारे मंगल, सारे सुख भीतर ही समाए हुए हैं। अभ्यास करते जांय, धर्म में पकते जांय और अपना सही मंगल साधते जांय। अपने मंगल में लोक-मंगल समाया हुआ है। लोक मंगल में अपना मंगल समाया हुआ है। धर्म में सबका मंगल समया हुआ है।

कल्याण मित्र,
स. ना. गो.

(पू. गुरुजी के प्रवचन का श्री. रामसिंह द्वारा संक्षिप्तिकरण)

सहायक आचार्योंके भावी शिविर

आर.एस./३ हैदराबाद	५-१२ से १६-१२-८२	श्री रामसिंह
आर.एस./४ इगतपुरी	२१-१२ से १-१-८३	श्री रामसिंह
एन. एच. / ७ कलकत्ता	२१-१२ से १-१-८३	श्री एन. एच. पारीख
एल. एन. / ४ इन्दौर	२३-१२ से ३-१-८३	श्री लक्ष्मी नारायण राठी

(स्थान-रामकृष्ण धर्मशाला, इंदौर)

संपर्क

१) इगतपुरी — व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ फोन इगतपुरी ७६

२) हैदराबाद — १) श्रीमती ऊषाबेन पी. मेहता, ६१, भीनगर कॉलोनी हैदराबाद-५००८७३. फोन : ३०२९१. अथवा
२) श्री पूरनमल अग्रवाल, द्वारा-होटल राजधानी सिद्दिअम्बर बाजार, हैदराबाद-५०००१२. फोन : ५७५७१

३) कलकत्ता — १) श्री सुदर्शन ढंढारिया, C/o बिदर्शन शिक्षा केंद्र ४८-डी, मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००००७ फोन : ३४४७९२,३४१३९३ अथवा
२) श्री नागरमल पेडीवाल, पायोनियर प्लास्टिक्स, ९ इज्रा स्ट्रीट, कलकत्ता-७०००००१. फोन : ३६४०८०/८१ ग्राम: प्लास्टिप्लाई

४) इन्दौर — १) श्री भगवानदास तोषणीवाल ३ डॉ. रोशनसिंह भंडारी मार्ग इन्दौर (म. प्र.) टेलीफोन ५४४० अथवा
२) श्री मोहनलाल केला ५९ साकेत, इन्दौर (म. प्र.) टेलीफोन ५४०९, ६८००

★

- भावी शिविर -

शि. क्र.	स्थान	दिनांक से तक
२२४	इगतपुरी	१०-१२-८२ से २१-१२-८२ (हिंदी)
२२५	इगतपुरी	१-१-८३ से १२-१-८३ (अंग्रेजी)
पू. गुरुजीका स्वयं शिविर*	इगतपुरी	१८-१-८३ से ३०-१-८३
१) दीर्घ शिविर*	इगतपुरी	३०-११-८२ से ३१-१२-८२
२) दीर्घ शिविर*	इगतपुरी	१-१-८३ से ३०-१-८३

शि. क्र.	स्थान	दिनांक से तक
२२६	हैदराबाद	३-२-८३ से १४-२-८३ (हिंदी)
◉ लघुशिविर	हैदराबाद	१४-२-८३ से २१-२-८३

*इन शिविरोंमें पू. गुरुजी द्वारा स्वीकृत पुराने साधक ही प्रवेश पा सकेंगे।

◉ (केवल पुराने साधकों के लिए) इसमें पूज्य गुरुजी सतिपट्ठान सुत्त की व्याख्या करेंगे।

एक शुभेच्छु की
मंगल कामनाओं
सहित
↓

दोहे धर्म के

मरुधर मरुधर भटकते, हुआ तृषित गुमराह।
धन्य धरम सरवर मिला, अमृत भरा अथाह॥

पुण्य जगा तो ही हुआ, मंगल धरम मिलाय।
दूर हुए दुख द्वन्द सब, दूर हुए भव ताप॥

सम्प्रदाय की बेड़ियां, दर्शन का जंजाल।
धर्म चक्र से सब कटे, मानव हुआ निहाल॥

शापित तापित चित्त को, मिली धरम की छांह।
अंतरतम शीतल हुआ, दूर हुआ दुख दाह॥

मंगलमयी विपश्यना, दूर करे दुख द्वंद्व।
जो साधे सो विमल हो, चखे मुक्ति मकरंद॥

जीवन में जागे धरम, तन मन पुलकित होय।
अपना भी मंगल सधे, जन जन मंगल होय॥

दूहा धरम रा

धरम न तरक वितरक है, धरम न वाद विवाद।
जो धारै निरमल हुवै, चाखै धरम रो स्वाद॥

सील हुयां ही होवसी, सुद्ध धरम रो ध्यान।
अंतर प्रग्या जागसी, पासी पद निरवाण॥

करम रतन सो जगत मँह, और रतन ना कोय।
दुख दाळद सारा मिटै, सब बिध मंगल होय॥

हुवै समरपण धरम नै, ज जीवन परजन्त।
मिनख जमारो धन हुवै, हुवै दुखां को अन्त॥

जीवै जीवन धरम को, उखड़ै दुख को मूल।
साप ताप सगळा धुलै, कटै करम का सूळ॥

सील समाधी ग्यान को, इसो रतन अनमोल।
दाळद मिटज्या, मिनख की, सुफळ हुवै या खोळ॥

"सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बंबई-२३. टेलीफोन : २१३५१०. ◉ मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपूर, नासिक-४२२ ००७. टेलिफोन : ८८२५१. ◉ पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रु. ५००/-, चौथाई पृष्ठ रु. २५०/- ◉ वार्षिक शुल्क रु. ५/-, आजीवन शुल्क रु. ५१/-

---

विपश्यना" 11(2)/82
पो. रजि. नं (M) NS (C) 36

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)